कार्पोरेट लूट की पहाड़ी एनएमडीसी बैलाडीला को देखकर लौटा हूं

उत्तम कुमार, सम्पादक दक्षिण कोसल

जल पर उद्योगपतियों और एनजीओ की नजर है। जंगल नक्सलियों और सुरक्षा बलों के कब्जे में है। जमीन का अब क्या करेंगें उन्हें कैम्पों तथा भगवान भरोसे जो रहना है। संस्कृति का क्या करे सिर्फ बलात्कार, लूट, आतंक, डर, पुलिस, सुरक्षाबल और नक्सलियों से अटा पड़ा है और उनके बंदूक से निकले गोलियों की आवाज से आदिवासी बात करते हैं, उसी में हंसते और रोते भी हैं। और बार-बार हो रहे उन पर अत्याचार को देख मैं बीमार होता जा रहा हूं।

संविधान को जब आदिवासियों के अधिकार और उनकी अस्तित्व की रक्षा के लिए टटोलता हूं तो वहां 5वीं और 6वीं अनुसूची, पेसा कानून 1996, एफआरए 2006, भूमि-अधिग्रहण, एससी/एसटी एट्रोसीटिज एक्ट 1989 एवं रूल्स 1995 , एसएसी/एसटी सबप्लान की राशि का कार्य सीएसआर, डिस्ट्रीक मिनरल फाउन्डेशन (डीएमएफ), ट्राईबल एडवायजरी काऊंसिल जैसे कवच कुंडल शास्त्रागार में भरे पड़े हैं। इसके क्रियान्वयन ना जाने क्यों निष्क्रिय आयुध शाला में बंद पड़े हैं। इतिहास के जानकारों के अनुसार बस्तर के बैलाडीला में 1065 ईस्वी में चोलवंशी राजा कुलुतुन्द नें पहली बार यहां के लोहे को गलाकर अस्त्र शस्त्र बनाने का कारखाना लगाया था।

यहां से बने हथियारों को बैलगाडियों से तंजाउर भेजा जाता था, बहुत बड़ी मात्रा में निर्मित हथियारों के बल पर चोलवंशियों ने पूर्वी एशियाई देशों में 11वीं शताब्दी के मध्यकाल में अपना साम्राज्य स्थापित कर लिया था।

लौह अयस्क खनन के लिये नन्दराज पर्वत सहित समूचे बस्तर की खुदाई सदियों से होते आ रही है, बस्तर का लोहा, बस्तर का हीरा, बस्तर की वन सम्पदा सबके काम आई, यहां के लड़ाकुओं ने 10 बड़ी लडाईयां लड़ी, अकूत धन संग्रह किये गये और कीर्तिमान के तमगे और कप सब संग्रहालय में सुरक्षित हैं। बस्तर का आदिवासियों को लूटते लूटते उनके अधमरे शरीर को आज चील कौओं के खाने के लिए छोड़ दिया गया है। सहनशीलता की पराकाष्ठा होती है, इन आदिवासियों ने इस लूट और भय को भेदते हुए उनके तमाम शक्तिशाली सैनिकों के खिलाफ रक्तिम विद्रोहों में शामिल होना नहीं छोड़ा है। लंगोटी तो अब विदेशियों और देशी हुकमरानों के कैमरों में कैद है जो बच गया वह हमारे आपके मोबाईल में लुंगी के रूप में तन को ढकते उकेर आई है। किन्तु देख क्या रहा हूं जो लोग कहते हैं कि संघर्ष का फल मीठा होता है इनके हाथ कुछ भी तो नहीं आया ? फल तो दूर खाली कटोरा भी नहीं ?

आज के बस्तर के आदिवासी भी बैलाडीला में पाए जाने वाले पत्थरों से लोहा निकालने में सिद्धहस्त हैं। उनके सभी औजार स्थानीय लौह अयस्क से ही निर्मित होते आ रहे हैं। यदि आप भोपाल में मानव संग्रहालय आते हैं तो उन आदिवासियों के द्वारा लोहा निर्माण की विधि और इससे बने कलात्मक कृतियों से भी रू-ब-रू हो सकते हैं। परंतु विशाल पैमाने पर वहां तथा उसके आस-पास सैकड़ों किलोमीटर तक फैले तराई में जहां हम रहते हैं के बीच लौह अयस्क के उत्खनन एवं निर्यात की कुछ अलग ही कहानी लूट और साम्राज्य स्थापित करने से जुड़ा हुआ है। यह भी जानकारी लिख लीजिए कि 19वीं शताब्दी के आरंभ में आगरिया आदिवासियों के कम से कम 441 परिवार घरेलू भट्टियों में आयरन ओर से इस्पात बनाने का काम करते करते मरते खपते चले आ रहे हैं।

डीला बड़ी-बड़ी विदेशी मशीनों के उत्खनन के बाद उजाड़ मैदान में त्राही मचाते नजर आएंगे। यह पहाड़ समुद्र की सतह से 4133 फीट ऊंचा है। इस पहाड़ के ऊपर दो रेंज बराबर मिली हुई चली गयी हैं जिनके बीचों बीच साफ नैसर्गिक मैदान हैं। यहां से तीन बड़ी नदियां निकलती हैं जिनके किनारे किनारे बेंत का सघन जंगल हमें आकर्षित करता है। इन झरनों का पानी का प्रभाव था कि हमें ठुठरन हो रही थी इतिहासविदों के अनुसार 19वीं सदी के अंत में पीएन बोस, जो एक ख्याति प्राप्त भूगर्भशास्त्री थे, खनिजों की अपनी खोज में बैलाडीला पहुंच गये थे और उन्हें वहां मिला उच्च कोटि का लौह अयस्क। तदुपरांत भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण (जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया) के कूकशेंक ने 1934-35 में पूरे इलाके का सर्वेक्षण कर भूगर्भीय मान चित्र बनाया और 14 ऐसे पहाड़ी क्षेत्रों (भंडारों-डेपॉजिट्स) को यहां बड़ी मात्रा में लौह अयस्क उपलब्ध थे, क्रमवार चिन्हित किया।

बैलाडीला की पहाडियों में प्रचुर मात्रा में उच्चतम कोटि के लौह अयस्क के खुले भंडार हैं, बताते चले यह छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा जिले में स्थित है। आदिवासियों के कुर्बानियों के बीच खड़ा इस औद्योगिक क्षेत्र के दो प्रमुख नगर हैं। पहला किरन्दुल और दूसरा बचेली। जहां मुझे आदिवासी दूर-दूर तक नजर नहीं आएं। आएं भी तो स्टीफन स्पीलबर्ग की जुरासिक पार्क की तरह खदानों में चढ़ते सडकों से दसियों किलोमीटर अपनी जीवन को जिंदा रखने उतरते हुए। रायपुर से किरन्दुल की दूरी 424 किलोमीटर है जबकि बचेली 12 किलोमीटर पहले पड़ता है। आज से वर्षों पहले लिखा गया था कि बैलाडीला पहाड़ बैल के डीला के आकार का होने के कारण इस नाम से पुकारा जाता है लेकिन मुझे ऐसा क्यों लगता है कि यह डीला कुछ वर्षों बाद नहीं लिखा जाएगा क्योंकि उस समय यह दिखेगा ही नहीं।

डीला बड़ी-बड़ी विदेशी मशीनों के उत्खनन के बाद उजाड़ मैदान में त्राही मचाते नजर आएंगे। यह पहाड़ समुद्र की सतह से 4133 फीट ऊंचा है। इस पहाड़ के ऊपर दो रेंज बराबर मिली हुई चली गयी हैं जिनके बीचों बीच साफ नैसर्गिक मैदान हैं। यहां से तीन बड़ी नदियां निकलती हैं जिनके किनारे किनारे बेंत का सघन जंगल हमें आकर्षित करता है। इन झरनों का पानी का प्रभाव था कि हमें ठुठरन हो रही थी इतिहासविदों के अनुसार 19वीं सदी के अंत में पीएन बोस, जो एक ख्याति प्राप्त भूगर्भशास्त्री थे, खनिजों की अपनी खोज में बैलाडीला पहुंच गये थे और उन्हें वहां मिला उच्च कोटि का लौह अयस्क। तदुपरांत भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण (जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया) के श्री कूकशेंक (Crookshank) ने 1934-35 में पूरे इलाके का सर्वेक्षण कर भूगर्भीय मान चित्र बनाया और 14 ऐसे पहाड़ी क्षेत्रों (भंडारों-डेपॉजिट्स) को यहां बड़ी मात्रा में लौह अयस्क उपलब्ध थे, क्रमवार चिन्हित किया।

अब पत्रकारों को इन पहाडियों, वादियों, जंगलों तथा आदिवासियों के बीच विचरण करने के लिए अनुमति की जरूरत होती है। नहीं तो गिरफ्तारी के लिए तैयार रहें इतिहासविदों के अनुसार भारत के लौह अयस्क पर अध्ययनरत टोक्यो विश्व विद्यालय के प्रोफेसर एउमेऊरा ने जापान के इस्पात उत्पादन करने वाले मिलों के संगठन को बैलाडीला में उच्च कोटि के लौह अयस्क की मौजूदगी के बारे में बताया। उन दिनों जापान के इस्पात मिल उच्च कोटि के लौह अयस्क के निरंतर आपूर्ति के लिए प्रयासरत थे। बताया यह भी जाता है कि सन 1957 में उनका एक प्रतिनिधि मंडल असादा के नेतृत्व में भारत पहुंचा और विभिन्न लौह अयस्क क्षेत्रों का भ्रमण किया और उस समय जापान से एमओयू की प्रक्रिया शुरू हुई।

मार्च 1960 में भारत सरकार एवं जापानी इस्पात मिलों के संघठन के मध्य अनुबंध के तहत बैलाडीला से 40 लाख टन एवं किरिबुरू (उड़ीसा) से 20 लाख टन कच्चे लोहे का निर्यात जापान को किया जाना तय हुआ। इसके लिए आवश्यक था कि बैलाडीला के चयनित भंडार क्रमांक 14 के रूप में चिन्हित क्षेत्र में आवश्यक विकास तथा संयंत्रों की स्थापना की जावे। जहां बताते हैं कि आकाशनगर था और लोगों को सबसे ऊंची पहाड़ी से उतरने के लिए समयानुसार एनएमडीसी कम्पनी वाहनों का इंतजार करना पड़ता था। इन बुनियादी सुविधाओं के निर्माण के लिए जापान की सरकार ने आवश्यक भारी उपकरण, तकनीकी सहायता तथा धन राशि उपलब्ध कराई जिसका समायोजन निर्यात किए जाने वाले लौह अयस्क को कोड़ी के मोल लूट कर ले जाना था। योजना का क्रियान्वयन राष्ट्रीय खनिज विकास निगम के द्वारा किया गया। उन दिनों अखबार में खबर थी कि लौह अयस्क के निर्यात किए जाने के लिए पूरा खर्च जापान वहन कर रही है और वह 20 वर्षों तक वहां के अयस्क का दोहन करेगी।

जानकारों के अनुसार जून 1963 में वहां कार्य प्रारंभ किया गया और 7 अप्रेल 1968 को सभी प्रकार से पूर्ण हुआ। लौह अयस्क का निर्यात इसके पूर्व से ही प्रारंभ हो गया था। अब इन पहाडियों में चीन से निर्मित सॉवेल काम कर रहे हैं।यहां पाए जाने वाला लौह अयस्क फ्लोट ओर कहलाता है अर्थात जो सतह पर ही मिलता हो और जिसके उत्खनन के लिए जमीन का उत्खनन कर अंदर नहीं जाना पड़ता। अब बात आती है उसके निर्यात की। अनुबंध हुआ कि लौह अयस्क समुद्री मार्ग से ही जाएगा। बैलाडीला के लिए निकटतम बंदरगाह विशाखापट्नम था। सडक़ मार्ग से अयस्क की ढुलाई लगभग असंभव बात थी। इसलिए बैलाडीला के तलहटी से विशाखापट्नम को जोडने के लिए 448 किलोमीटर लंबे रेलमार्ग के निर्माण का भी प्रावधान परियोजना में शामिल किया गया। यही सबसे बड़ी चुनौती भी रही। भारत के सबसे पुरानी पूर्वी घाट पर्वत श्रृंखला को भेदते हुए लाइन बिछानी थी।

पर्वत श्रृंखला को भेदना आसान नहीं क्योंकि पूर्वी घाट पर्वत श्रृंखला की चट्टाने क्वॉर्ट्साइट श्रेणी की थी और वर्षों के मौसमी मार से जर्जर हो चली थीं। ऊंचाई भी 3270 फीट, कदाचित् विश्व में इतने अधिक ऊंचाई पर ब्रॉड गेज की रेल लाइन की परिकल्पना अपने आप में अनोखी थी। इसके लिए दंडकारण्य बोलंगीर किरिबुरू रेलवे प्रॉजेक्ट परियोजना बनाया गया। जापान के साथ करार के तहत 20 लाख टन लौह अयस्क किरिबुरू (उड़ीसा) से भी निर्यात किया जाना था इसके लिए तीन नये रेल लाइनों की आवश्यकता थी परंतु जहां तक बैलाडीला का सवाल है, इसके लिए विशाखापट्नम से 27 किलोमीटर उत्तर में कोत्तवलसा से किरन्दुल तक 448 किलोमीटर लंबी लाइन बिछानी थी। लूट को आसान करने वाले इंजीनियरों ने असंभव को संभव कर दिखाया वह बहुत ही कम समय में। इस तरह 87 बड़े बड़े पुल जो अधिकतर 8 डिग्री की मोड़ लिए और कुछ तो 150 फीट ऊंचे खम्बों पर बने, 1236 छोटे पुलिए, 14 किलोमीटर से भी लम्बी सुरंगें।

सबसे बड़ी कठिनाई थी कार्य स्थल पर भारी उपकरणों को पहुंचाना। यहां तक लोहे और सीमेंट को भी ले जाना भी दुष्कर ही था। कार्य प्रारंभ हुआ था 1962 में और 1966 में यह रेलवे लाइन तैयार हो गयी। लौह अयस्क की ढुलाई 1967 में प्रारंभ हुई। इस पूरे परिश्रम की लागत थी मात्र 55 करोड़ और आज होता तो 5500 करोड़ लगते। इस बीच पर्यावरण विनाश को नजरअंदाज किया गया। बड़ी तीनों नदियां प्रदूषित हो गई हैं। कई आदिवासी प्रजाति खत्म होने के कगार पर है। जैव विविधता विनाश के चरम सीमा में पहुंच चुके हैं ।विशाखापट्नम से बैलाडीला (किरंदुल) रेल मार्ग को (कोत्तवलसा- किरंदुल) लाइन कहा गया था। आजकल विशाखापट्नम से एक्सप्रेस रेलगाड़ी चलती है। सितम्बर 1980 से यह रेल मार्ग विद्युतिकृत है, जब की भारत के महत्वपूर्ण लाईने भी विद्युतिकृत नहीं हुई थीं। ऊंचे पहाडियों पर से गुजरने के कारण भू परिदृश्य अद्वितीय है।

बताया यह भी जाता है कि यह गाड़ी अरकू घाटी (फूलों की घाटी) से जब गुजरता है तो सांस थम सी जाती है। यहीं बोर्र गुहालू नाम की विख्यात गुफा भी है जिसके अन्दर बिजली से प्रकाश की व्यवस्था की गयी है। इसी नाम का स्टेशन भी है। बताया जाता है कि विशाखापट्नम में जापान के जहाज लंगर डाले खड़े रहते थे। किरंदुल से लौह अयस्क रेलगाड़ी में पहुंचता और सीधे जहाज के गोदी में डिब्बे उलट दिए जाते। एक जहाज में आठ रेलगाडियों का माल समा जाता था। बात हमने बैलाडीला के लौह अयस्क से शुरू की है तो इसके उत्खनन के बाद विशाखापट्नम में एक इस्पात संयंत्र का स्थापना कर लौह अयस्क से इस्पात निर्माण के कार्य पूरे किए गए। जापान को पहुंचाने के बाद बैलाडीला क्षेत्र के लौह भंडार का पूरा उपयोग एक अकेले संयंत्र के बूते के बाहर है, इसलिए बस्तर के विकास का नाटक करते हुए 14000 करोड़ रुपयों के निवेश से जगदलपुर के समीप नगरनार में एक एकीकृत इस्पात संयत्र की स्थापना किया गया है। इसकी आधारशिला रखी जा चुकी है और आवश्यक भूमि का भी अधिग्रहण हो गया है।

इस कहानी को पलटते हुए लूट की दूसरे अध्याय की आवरण कथा को भी सुन लीजिए। एस्सार ने 2006 में ही बस्तर के बैलाडीला से विशाखापटनम तक 267 किलोमीटर लंबी पाइपलाइन का निर्माण किया है। दुनिया की दूसरी सबसे लंबी पाइपलाइन के सहारे हर साल 80 लाख टन लौह अयस्क के चुरे की ढुलाई की जा रही है। कुछ आंकड़े बताते हैं कि प्रतिदिन 22 हजार टन लौह अयस्क इन्द्रावती नदी के पानी के दबाव से विशाखापट्टनम पहुंचाया जाता है। अब लौह अयस्क बाहर जाएगा ही जाएगा साथ ही हमारी जीवनदायिनी नदियों की पानी भी लूट लिए जा रहे हैं। जानकारों की माने तो पाइपलाइन के लिए 8.4 मीटर चौड़ाई की जरुरत थी, लेकिन एस्सार कंपनी ने 20 मीटर की चौड़ाई में सारे पेड़ काट डाले। कई पेड़ कई साल पुराने बताए जा रहे हैं। हां इस बीच एस्सार वाले बैलाडीला से लौह अयस्क को चूर्ण रूप में (पानी के साथ) पाइप लाइन के माध्यम से विशाखापट्नम पहुंचाने मे सफल रहे हैं।

आदिवासियों के साथ प्रदेश की बदहाली भी जारी है!